सोच में इज़ाफे की पत्रिका

सदीनामा

ISSN : 2454-2121

वर्ष-17 ❐ अंक-06 ❐ 1 से 30 अप्रैल, 2017 ❐ पृष्ठ-16+12 ❐ R.N.I. No. WBHIN/2000/1974 ❐ मूल्य-5.00 रुपए

चुनाव प्रक्रिया एक धर्मनिरपेक्ष गतिविधि है

पिछले कुछ दशकों में धर्मनिरपेक्षता शब्दो बदनाम करने और उसके अर्थ को तोड़ने-मरोड़ने के कई प्रयास हुए हैं। भारत के संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है सभी धर्मों का बराबर सम्मान और इस सिद्धान्त का कड़ाई से अनुपालन कि राज्य की नीतियाँ किसी धर्म से प्रभावित या निर्देशित नहीं होंगी। यही भारतीय संविदान का मूल स्वर भी है। शासक राजनीतिक दलों द्वारा धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्तों की गलत विवेचना के कारण साम्प्रदायिक तत्वों को धर्मनिरपेक्षता पर ही प्रश्नचिन्ह लगाने का बहाना मिल गया है।

इस पृष्ठभूमि में, उच्चतम न्यायालय की सात सदस्यीय पीठ का यह निर्णय स्वागतयोग्य व राहत पहुँचाने वाला है कि "चुनाव प्रक्रिया एक धर्मनिरपेक्ष गतिविधि है"। इस निर्ण से उन सभी लोगों को प्रसन्नता हुई है जो बहुवाद में निहित न्याय के मूल्यों के हामी हैं। उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है और किसी भी धर्मनिरपेक्ष राज्य में चुनावी प्रक्रिया के दौरान धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्तों की अवहेलना और उनका उल्लंघन नहीं होना चाहिए। न्यायालय ने यह भी कहा कि राजनैतिक उद्देश्यों के लिए धर्म का दुरुपयोग, जनप्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 123 के अधीन भ्रष्ट आचरण है। न्यायालय ने यह भी कहा कि चुनावी प्रक्रिया की पवित्रता और शुद्धता के संरक्षण की जिम्मेदारी केवल चुनाव लड़ रहे उम्मीदवार की नहीं है। उसके एजेंटों का आचरण और उसका चुनावी घोषणापत्र भी धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्तों के अनुरूप होना चाहिए।

निर्णय में यह भी कहा गया है कि चुने हुए जनप्रतिनिधि की सोच और आचरण दोनों धर्म निरपेक्ष होना चाहिए और यह भी कि धार्मिक अल्पसंख्यकों के हित में सकारात्मक कार्यवाही, धर्मनिरपेक्ष आचरण का हिस्सा है। यह निर्णय न्याय के उन मूल्यों के अनुरूप भी है जो धर्मनिरपेक्ष प्रजातंत्र की नींव होती है। इस निर्णय ने भारतीय संविधान के निर्माताओं द्वारा प्रतिपादित धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों को मानो नवजीवन दिया है।

इस निर्णय का कई राजनीतिक दलों ने स्वागत किया है और इनमें वे दल भी शामिल हैं जो धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों पर प्रश्नचिन्ह लगाते आए हैं और जिन्होंने धार्मिक पहचान का इस्तेमाल अपनी ताकत में वृद्धि के लिए किया है। इस निर्णय ने हमें यह रास्ता दिखाया है, जिस पर बहुवादी भारत को चलना चाहिए– एक ऐसे भारत को जिसमें सभी की गरिमा और अधिकारों की रक्षा हो सके। इसके साथ ही, इस निर्णय को लागू करने में आने वाली चुनौतियों का आंकलन करना भी जरूरी है।

यह निर्णय उन हस्तक्षेपकर्ताओं के प्रयासों से आया है जो उच्चतम न्यायालय से यह मांग कर रहे थे कि वह 1995 के अपने कुख्यात 'हिन्दुत्व निर्णय' पर पुनर्विचार करे इस निर्णय में यह कहा गया था कि हिन्दू धर्म व हिन्दुत्व इतना विविधवर्णी है कि उसे परिभाषित करना मुश्किल है और इसलिए वह "जीवन जीने का एक तरीका है"। यह निर्णय हिन्दू धर्म की

सम्पादकीय

वित्तीय निरक्षरता की कीमत

देश मे जूता चला तो नाम बाटा हो गया
देश में लोहा गला तो नाम टाटा हो गया
योजनाएं जमा धन करने की चली कुछ इस तरह
हम जमा करते रहे खाते में घाया हो गया।

दक्षिण के राज्यों को छोड़ दें तो पूरे देश में पोंजी वित्तीय संस्थाओं ने लोगों को ठगा है। आज सहाराश्री सुब्रत राय जेल में हैं और दर्जनों भी। एक जमाना था प्राइवेट कम्पनियाँ पैसा जमा लेती थीं और समय पर लौटाती थीं चाहे डनलप हो या दूसरी बड़ी कम्पनियाँ। बाद में ठगी के लिए दूसरे तरीकों में एक इस्तेमाल होने लगी पोंजी कम्पनियाँ। इन कम्पनियों ने लोगों को खूब ठगा। जब हमने वित्त मनोविज्ञान को समझने की कोशिश की तो पता चला कम समय में अधिक से अधिक ब्याज। दलालों को पकड़ और पूंजी का अनवरत प्रवाह चाहे राशि छोटी हो या बड़ी। चली आती रही है। इसके अलावा बचत और निवेश की समझ को साफ-साफ न होना तथा सबको एक ही समझ लेना। आजकल आवारा पूंजी का साहित्य में बहुत जिक्र हो रहा है। असल में इस तरीके से जो पूंजी आती है वह बेलगाम हो जाती है। बंगाल में जब भी नए-नए अखबार, टीवी चैनल आने लगते हैं, भय होने लगता है यह पूंजी कहाँ से आ रही है। मामला ओंवरलैण्ड से नारदा काण्ड तक है। आज तहलका मीडिया जिसने नारद स्टिंग करवाया आज 70% भागीदारी इसी तरह की पूंजी के कारण है, जिसको होल्ड करते हैं। तृणमूल पार्टी के सांसद के॰डी॰ सिंह कम्पनी का नाम है अलकेमिस्ट ऐसी ही दर्जन कम्पनियों ने करोड़ों रुपया के हेराफेरी की है। जरूरत है। वित्तीय साक्षरता की और उन संस्थानों के सक्रिय होने की जिनकी जिम्मेदारी वित्तीय आवारा कुत्तों को कपड़ने और बधिया करने की है।

जितेन्द्र जितांशु

पत्राचार का पता :

सम्पादक - सदीनामा
48/49A, Swiss Park,
Kolkata-700 033
West Bengal. India
☎ : 9231845289
E-mail : jjitanshu@yahoo.com

संपादक मण्डल

उप-संपादक	:	**तितिक्षा तथा पापिया भट्टाचार्य**
संपादकीय सलाहकार:		**यदुनाथ सेउटा**
संपादक	:	**जितेन्द्र जितांशु**
विशेष सहयोग	:	**आरती चक्रवर्ती, एच॰ विश्वाणी तथा राजेन्द्र कुमार रुईया (अमेरिका) सभी अवैतनिक हैं।**

युवा कविता

जिंदगी एक चुनौती है

जिंदगी एक चुनौती है मन मन्दिर है
तन वेश कलंदर है
जिंदगी एक समूंदर है
आदमी मसत कलंदर है
जो जीत गया वो सिकंदर है
जिंदगी एक नियामत है
बचपन भोलापन है
जवानी कियामत है
बुढेपा लाहनत है
हर तरफ मैं और मेरी का हुंदगढ़ है
जमाने की रफतार इस तरह बढ गई है
सुबह कलकते शाम को दिल्ली, पटिआला और जलंधर

–परवेश पटिआलवी
पंजाबी, हिन्दी कवि, नाटककार
6, नंदन रोड, कलकत्ता–25

गजल

तुम्हीं बताओ इस महफिल में मुझसे बेहतर कितने हैं।
लब पे मीठे बोल हैं जिनके दिल में खंजर कितने हैं।।

आओ चल कर हम ही पूछे अहले सियासत से यारों।
इवानों में बैठने वाले अमन के पैकर कितने हैं।।

कल तो ठाठे मार रहा था सर का समुन्दर सड़कों पर।
आज जरा हम चल कर देखें राह पर अब सर कितने हैं।।

मकरो दगा अब आम है यारों गाँव-गाँव शहरों में।
अब तो हमको सोचना होगा मुखलिश खबर कितने हैं।।

कुदरतें है इस दुनिया में फन के लालो गौहर की।
शोहरत के मीनार पे यारों कंकड़-पत्थर कितने हैं।।

अहले नजर तो भार ही लेंगे फन के हर एक पहलू को।
फिक्र कि तेरे सीप में माजर लालो गौहर कितने हैं।।

–मुज्तर इफ्तेखारी
अनुवाद - नाहिद अन्जुम

युवा कविता

अंधेरे के विरुद्ध मुक्तिबोध का संघर्ष

प्रगतिशील लेखक संघ द्वारा 26 मार्च 2017 को हरियाणा भवन, कोलकाता में मुक्ति बोध शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी का आरंभ श्री जीतेन्द्र धीर के स्वागत भाषण से हुआ। सुश्री रश्मि भारती ने कात्यायनी की कविता "मुक्तिबोध के लिए" का भावपूर्ण पाठ किया और रंगकर्मी श्री जितेन्द्र सिंह ने मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' विशेष अंश की नाट्य प्रस्तुति की। डॉ० सूफिया यास्मीन ने कहा कि मुक्तिबोध की कविताओं में जो अंधेरा है उससे आशा की किरणे फूटती हैं। बिहार के रवीन्द्रनाथ राय ने कहा कि मुक्तिबोध का साहित्य हमें फासिज्म का डटकर मुकाबला करने की शक्ति देता है। कवयित्री पूनम सिंह ने मुक्तिबोध की कविता के उन सूत्रों पर बात की जिनसे हमें मुक्तिबोध को समझने में मदद मिलती है। इंदौर के कवि और एक्टिविस्ट श्री विनीत तिवारी ने मैं के एक अंश 'आ मेरे आदर्शवादी मन' का भवपूर्ण गायन किया। उन्होंने कहा कि मुक्तिबोध की वैचारिक प्रतिबद्धता और दृढ़ता हमें रास्ता दिखाती है। आलोचक श्रीनिवास शर्मा ने मुक्तिबोध के आर्थिक और मानसिक दबावों का जिक्र करते हुए कहा कि वह आत्मचेतस से अधिक विश्वचेतस थे।

"जितेन्द्र जी मैं कोलकाता में हूँ"

नरेन्द्र सिंह जी वर्षों से 'समय सुरभि अनंत' पत्रिका निकालते हैं, आरा से। उनको फोन आया कि जितेन्द्र जी मैं कोलकाता में हूँ। पहुँचा हरियाणा भवन मुलाकात हुई बहुत अच्छा लगा। प्रभाकर चौबे और नथमल शर्मा जी से मुलाकात बोनस रही।

–सं०

प्रख्यात आलोचक श्री खगेन्द्र ठाकुर ने कहा कि मुक्तिबोध की कविताओं में अस्मिता बोध है जो जनता को पूंजीवाद के खिलाफ लगातार सचेत करता है। प्रलेस के राष्ट्रीय महासचिव श्रीराजेन्द्र राजन ने विष्णुशर्मा चन्द्र द्वारा लिखित मुक्तिबोध की जीवनी के महत्व को रेखांकित करते हुए कहा कि मुक्तिबोध की कविता 'अंधएरे में' अंधेरे की कविता नहीं है बल्कि वह अंधेरे से निकलने की राह दिखाती है। रायपुर के श्री प्रभाकर चौबे ने मुक्तिबोध से जुड़े संस्मरण सुनाते हुए उनके जीवट और साहस को रेखांकित किया। अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए कथाकार सिद्धेश जी ने मुक्तिबोध की कविताओं को उनके उद्भ्रांत मन की कविताएं बताते हुए कहा कि आज खतरा निरन्तर बढ़ रहा है और ऐसे समय में हमें मुक्तिबोध की जरूरत और भी ज्यादा है। इस अवसर पर प्रलेस के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष श्री नथमल शर्मा के सौजन्य से प्राप्त श्री जीवेश प्रभाकर द्वारा मुक्तिबोध पर बनाए एक कैलेंडर का विमोचन भी हुआ संगोष्ठी में शहर और देश के बुद्धिजीवी, साहित्यकार और शोध छात्र मौजूद थे। कार्यक्रम का सफल संचालन गीता दूबे और धन्यवाद ज्ञापन श्री अमिताभ चक्रवर्ती ने किया।

युवा कविता

काव्य पाठ की एक शाम

लंबे अंतराल के बाद कल शाम एक काव्य गोष्ठी में जाना हुआ। वैसे तो अक्सर मुझे किसी जगह न जाने के सटीक विश्वसनीय कारण खोजने पड़ते हैं, पर इस बार बी बात अलग थी। शहर में सुगबुगाहट हो रही थी कि कहीं कोई अनूठा आयोजन होनेवाला है। विश्वस्त सूत्रों से जानकारी तो मिल गयी थी, अब बस कही से मुझे उस गोष्ठी का निमंत्रण पाना रह गया था। एक दो सूत्रों ने मुझसे कहा भी कि आप चिन्ता न करें, हम वह भी कर देंगे, लेकिन मैंने कहा कि नहीं, मैं भी कोई कम स्वाभिमानी नहीं हूँ। खैर, इससे पहले कि स्थितियाँ गंभीर होती, खुद गोष्ठी के आयोजक ने मुझे निमंत्रण तो दिया ही, साहित्य की वर्तमान स्थिति पर एक व्याख्यान देने के लिए भी अनुरोध किया, पर मैंने अस्वीकार कर दिया। बात ऐसी है कि व्याख्यान बहुत जोखिम भरे होते हैं। यदि व्याख्यान ज्यादा आदर्शवादी हो जाये तो श्रोताओं पर कोई असर नहीं पड़ता, और ज्यादा यथार्थवादी हो जाये तो कुछ रचनाकार प्रत्यक्ष या परोक्ष शत्रुता ठान लेते हैं। मैं मध्यममार्गी हूँ अत: मैंने व्याख्यान देना गवारा नहीं किया। वैसे भी, शाल तो क्या श्रीफल की भी उम्मीद उस आयोजक से नहीं थी। ये दोनों ही मूल्यवान चीजें उन कवि मनीषी सुवयोवृद्ध साहित्यकार के लिए आरक्षित थी जिन्हें दूसरे शहर में विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था, और यदि स्थानीय दबाव का प्रबंधन कुशलतापूर्वक हो गया तो उन्हें ही अध्यक्ष भी बना जाना था। मैंने आयोजक महोदय से कहा – हालांकि बेटे की परीक्षा है, फिर भी मैं आ जाऊँगा, आखिर साहित्य सेवा भी तो जरूरी है।

तो साहब, मैं गया! जब आयोजन में पहुँचा तो देखा कि सरस्वती माँ के चित्र पर माल्यार्पण हो चुका था। बाहर से पधारे कवि-मनीषी सुवयोवृद्ध साहित्यकार सपत्नीक मंच के बीचोंबीच आसीन थे जिनके सामने की हिलती मेज पर श्रीफल और शाल रखा था, अन्य मंचस्थों के सामने केवल पतले-पतले गुलदस्ते। मंच की एक कुर्सी खाली थी जो उन महानुभाव की थी जो माइक पर खड़े व्याख्यान दे रहे थे। मैंने प्रवेश करते हुए अध्यक्षजी को विशेष और अन्य मंचस्थों को साधारण रूप से नमस्कार किया, फिर धीरे से श्रोताओं के बीच से होते हुए पीछे की एक कुर्सी पर अपनी जगह ले ली। होनहार की बात व्याख्यान भी समाप्त हो गया। मुझे लगा कि आज तो सब मेरे मुताबिक ही हो रहा है।

जैसे कि अघोषित परम्परा है, सबसे पहले नौसीखिए और नाकद्दावर कवियों की बाल-सुलभ सपाट प्रस्तुतियाँ हुईं जिनमें एकाध अपवाद को छोड़ दें तो गंभीर साहित्यकारों के लिए कुछ नहीं होता। चूंकि ये प्रस्तुतियाँ औसतन औसत होती हैं, इनके वृतांत को एक तरफ करके मैं सीधे अपने काव्य पाठ पर आ जाता हूँ एक नया उल्लेखनीय संयोग यह भी था कि गोष्ठी का संचालन एक संचालिका के हाथ में था। इनके बारे में सुना काफी था, देख आज पहली बार रहे थे। लगभग आधा दर्जन कवि रचनाएं पढ़कर यथास्थान चले गए। अब संचालिका महोदया ने पूर्व निर्धारित क्रम के अनुसार मुझे पाठ के लिए आमंत्रित किया। पहली बार मिलने पर भी लग रहा था कि उन्होंने मेरे बारे में पता कर लिया था। मेरी तारीफ में उन्होंने श्रोताओं को चेतावनी दी कि अब जो कवि अपनी कविता का पाठ करेंगे वे अतुकांत के सिद्धहस्त कवि हैं. इनकी कविताएं वाहवाही से ज्यादा आपका ध्यान चाहेंगी। जाहिर है यह बात खटकनी थी। प्रशंसा में इतना काफी था मेरी कविताएँ पूरी ध्यान चाहती हैं, वाहवाही का गुप्त चिट्ठा खोलने जरूरी नहीं था! खैर, ऐसे परिचय से अपनी रचनाओं का दबदबा बन रहा है, यह सोचकर मुझे बुरा नहीं लगा।

जैसे कोई अच्छा पेशेवर फोटोग्राफर कैमरे पर अपनी उंगली को हरकत देने के समय सांस रोक लेता है, वैसे ही खासम-खास घड़ी मेरे सामने थी। किसी उपग्रह के राकेट को आकाश में छोड़ने से पहले छोड़ने का बटन दबानेवाले वैज्ञानिक

के मन में जैसी ऊहापोह होती होगी, वैसी ही सिहरन अपनी कविता सुनाने से पहले मुझेमें हो रही थी। मैं ऐसा सकुचा रहा था जैसे वरमाला डालने आयी दुल्हन हूँ। दुल्हन को तो फिर भी कृत्रिम बनाव शृंगार का सहारा होता है, मेरा तो सारा दारोमदार ही मेरी रचना के शृंगार पर था। कविता के लिए मुझे आमंत्रित करने में संचालिका ने जिस गर्मजोशी से काम लिया था, उसे न्यायसंगत ठहराने के लिए मेरा मन अपनी कविता पर लंबी चौड़ी भूमिका पेश करने का था, परन्तु यह सोचकर मैंने कम शब्दों में ही गुजारा कर लिया कि भूमिका बड़ी करूँगा तो कविता कम सुना पाऊँगा।

बहरहाल, मैं कविता का आगाज करने को ही था कि शहर से बाहर से पधारे मनोनीत अध्यक्ष श्यामवर्णी सुवयोवृद्ध कवि यकायक अपनी बात टुचाते हुए बोले –"अपनी रचना का संदर्भ जरा और स्पष्ट करने का कष्ट करें जिसमें रचना के रसास्वादन में भंग न हो, आपने जो बोल दिये उससे तो सब और गुम्फित हो गये।" गुस्सा तो मुझे तगड़ा आया, सबसे ज्यादा इस बात पर कि आजकल लोगों को सब रेडीमेड चाहिए, दिमाग पर जोर डालना ही नहीं चाहते। सब जगह से ठुकराये गए लोग कविता क्षेत्र में चले आते हैं। कविता तो अब मानों निकम्मों की शरणस्थली ही बन गई है। जो हो, अपने गुस्से को अपने चेहरे के नेपथ्य में ही धर-दबोचकर मैंने उन सुवयोवृद्ध कविवर से कहा– "महोदय मेरी रचनायें अपना संदर्भ आप ले के चलती है। इस मायने में वे पूरी तरह स्वावलंबिनी हैं। यदि आप रचना को समझ लेंगे तो संदर्भ आपको स्वयं समझ में आ जायेंगे।" मेरी इतनी चुनौती ने मेरे वयोवृद्ध प्रतिद्वन्द्वी को पराभूत कर दिया। अब यदि वे मुंह खोलेंगे तो इसका अर्थ होगा कि वे मेरी रचना ही नहीं समझे। इतना जोखिम तो कोई भी सामाजिक कवि नहीं लेगा, चाहे वह वास्तव में सामाजिक हो या न भी हो।...

अब दिग्विजयी होकर मैंने काव्य-पाठ प्रारम्भ किया। कविता का शीर्षक बताया– "बिजली!" नाम के मुताबिक मैं श्रोताओं पर बिजलियाँ गिराने के लिए अपने स्वर और भावों को परवान चढ़ाते हुए आकाश-पाताल एक करने लगा। परन्तु नौ-दस पंक्तियों तक पढ़ चुकने पर मुझे प्रामाणिक रूप से एहसास हो गया कि लोग मेरी कविता को नहीं मेरे हाव-भाव को ही लक्षित कर रहे हैं। अपनी इस भूल का एहसास करते ही मैंने पैंतरा बदला और उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ की शुरुआती शहनाई वाली तर्ज पर मानो काव्यमय कलेवर के साथ हौले-हौले "पूँ-पूँ" करने लगा। बीच-बीच में कनखियों से श्रोतावर्ग की ओर भी देख लेता ता, वह देखने के लिए कि अब उन पर क्या बीत रही है। अब वे पहले से ज्यादा तटस्थ नजर आ रहे थे। मैं समझ नहीं पा रहा था। इस बात को सकारात्मक रूप में लूँ या नकारात्मक रूप में। लेकिन अगली बारह-तेरह पंक्तियाँ पढ़ने तक मुझे लगने लगा कि माजरा नकारात्मकता की ही तरफ ज्यादा है। पर हाथ कंगन को आरसी क्या? अब मेरी "बिजली" की काव्य पंक्तियों का क्लाइमेक्स सामने आ रहा था। मैं उबड़-खाबड़ शब्दों और भावों के उच्चावचन से लबरेज पहाडिया कार्य के रसास्वादन की झंझा लोगों पर बेतरह बरसाने लगा। इत्मीनान होने लगा कि लोग अब कविता पर एकाग्र होने को हैं। सब कुछ ठीक रास्ते की तरफ जा रहा था पर कहावत जो है कि स्वर्ग के शिकारी कुत्ते सब जगह हैं। यहाँ शिकारी कुत्ता तो नहीं आया, लेकिन चायवाला लड़का भपाती केतली लिए काव्य-कक्ष में दाखिल हुआ सच कहता हूँ, मैं कलेजे तक फुंक गया। मुझे ज्ञान हो गया था कि अब अनर्थ होकर रहेगा। आखिर कवियों की मनोवृत्ति लक्ष्मी जैसी चंचल होती है।

बहुत पहले की बात है। मेरे एक प्रिय निर्माणाधीन कवि मित्र ने एक बार कहा था कि घर में माँ लक्ष्मी का सिर्फ वह चित्र लगाना चाहिए जिसमें वे बैठी हुई हों अन्यथा यदि चित्र में वे खड़ी होंगी तो पता नहीं कब सरक जायें? बात में लाजिक तो था, पर मैंने सोचा कि वह तो लक्ष्मी का चित्र है, वास्तव में लक्ष्मी घर में विराजी हैं या चलायमान हैं ये तो कैसे पता चलेगा। यह प्रसंग इसलिए याद आया कि शरीर में बैठे दिखाई देने पर भी गोष्ठी में उपस्थित कविवृन्द कहा-कहाँ

विहार कर रहे थे, कहाँ-कहाँ की तफरी कर रहे थे ये शायद वेदव्यास जी के लिए भी कहना मुश्किल हो! पहले ही कवियों की मन:स्थिति इतस्तत: बिखरी हुई थी, उस पर इस चायवाले बालक के प्रवेश ने रही-सही सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया। कविवृन्द ऐसे चहकने लगे जैसे भयंकर गर्मियों के समय कुल्फीवाले के दर्शन पाकर बच्चे चहकने लगते हैं। मुझे बहुत बुरा लगा, फिर भी मैंने कठोर आत्म-नियंत्रण बनाये रखते हुए, लेकिन बुझे हौसले से सबसे आग्रह किया कि आप पहले रचना पर ध्यान दें, सरस्वती आपके सामने हैं। लेकिन कवि कहाँ मानने वाले थे। एक मुंहफट कवि ने तो यहाँ तक कह दिया कि सभी ले रहे हैं तो आप भी ले लीजिए, कब तक भूखे भजन करते रहेंगे! इसे सुनते ही कवियों ने जोर का ठहाका लगाया। हारकर मैंने लोकसभा के स्पीकर की तर्ज पर कविता-पाठ चार मिनट के लिए स्थगित कर दिया।

मेरा खेल लगभग बिगड़ चुका था। बिछी बिछायी शतरंज के मोहरे किसी भूकंप ने हिला दिये थे। इस अफरा-तफरी को भारी मन से देखती मेरी निगाहें अब उन बहिरागत वयोवृद्ध कवि-सह-प्रतिद्वंद्वी की निगाहों से मिल गईं। बड़ी कातिल थी वह मुठभेड़! वे वयोवृद्ध होते हुए भी अपनी देह का अतिक्रमण करके इतने जवान लग रहे थे जैसे एक ही प्रेमिका को तहे दिल से चाहने वाले प्रेमियों में से कोई भी एक होता है। और उनमें मेरे प्रति वह कुटिलग जलन इतनी साफ थी कि उसकी आंच से मेरे माथे पर पसीना आ गया था। सड़कछाप उपन्यासों की भाषा में कहूँ तो उनकी आँखों से लाल-लाल चिंगारियाँ निकल रही थीं। मेरी कविता के कबाड़े पर वे फूले नहीं समा रहे थे। उनकी निगाहें मुझसे कह रही थीं– "और सयाना बन ले। मुझे जवाब देगा तू? ईश्वर भी तुझे माफ नहीं करेगा!" मुझे याद आया कि वे कुछ ही समय पहले बाहर गये थे। संशय हुआ कि कहीं चायवाले को लाने की साजिश इन्हीं की तो नहीं थी? पर वैसा हो नहीं सकता था। वे दूसरे शहर से आये थे। जाने की और भी कई वजहें हो सकती हैं। कोई कवि कोई काम क्यों कर रहा है ये उसके अलावा कोई नहीं बता सकता। कई बार तो वह खुद भी नहीं। फिलहाल मुझे वहाँ काव्येतर सब बातों पर गौर करने का अवसर मिल रहा था। इसके बाद जले पर नमक छिड़कने के लिए समोसे और मिठाइयों के दोने भी हमारे सामने रख दिये गये। जल्दी ही उनका सफाया भी हो गया।

एक बेहद दमघोंटू अंतराल के बाद मेरी कविता लोगों के समक्ष दोबारा आई। पर अब उसमें वह तलातुम नहीं रह गया था। पूर्व में मैंने भावों की जो सुनामी आहूत की थी उसका अधिकांश अब तक प्रशान्त महासागर की याददिलाने लगा था। ज्यादातर कविगण अब तृप्त थे, एकाध तो आगमन का उद्देश्य ही जैसे सार्थक हो चुका था। मैंने बुझे मन से अपनी कविता के उत्तरार्ध का पाठ किया। उस समय जो साहित्यिक मूर्च्छना वहाँ छायी थी वह मेरे कवि दुश्मनों को भी कभी झेलनी न पड़े। यह बात में अपने सच्चे दिल से कह रहा हूँ। मुझे लगा कि कर्म का फल भुगतना ही पड़ता है। मैंने एक बुजुर्ग साहित्यिक का मन-ही-मन अपमान किया, उसके साथ धृष्टता की, शायद इसी का मुझे यह अभिशाप झेलना पड़ा। वो तो अच्छा है कि मैं राजा हरिश्चन्द्र की तरह सत्यवादी नहीं हूँ। मेरी कविता का पाठ और श्रवण कब शुरू हुआ और कब समाप्त हो गया मुझे ही पता नहीं चला। और रस्म-अदायगी के तौर पर कविता की समाप्ति पर जो करतल ध्वनि और वाह-कार किया जाता है वह ठीक परम्परा के अनुरूप पाया गया। इसके लिए मैं सभी उपस्थितों का शुक्रगुजार हूँ, हालांकि जानता हूँ कि कवियों ने इतनी मुस्तैदी सिर्फ इसलिए दिखायी होगी कि यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो सबको लगेगा कि उनको मेरी कविता समझ में नहीं आयी, पसंद आना न आना दूसरी बात है। अपनी कविता का खौफ बरकरार रखने के लिए क्या क्या करना होता है, क्या क्या करना नहीं होता है, ये तो मेरा अंतर्मन ही जानता है। दुनिया अच्छाई और बुराई का एक खास अनुपात में मिश्रण है जो बदलता रहता है, जिसे जानना शायद ही किसी के बस का हो। बुराई से अच्छाई पर

प्रकाश पड़ता है और अच्छाई से बुराई पर, ये दोनों एक दूसरे को उजागर कर देते हैं।...

अपनी कविता सुनाकर मैं तुरंत राहत की सांस लेने के लिए थोड़ी देर बाहर चला गया। अंदर कार्यक्रम विधिवत चल निकला। लगा जैसे किसी बड़े भारी ऋण से पीछा छूटा है। सड़क पर घूम-घामकर मैं पाँच मिनट बाद फिर काव्य कक्ष में आ गया। मेरे वापस आने तक तीन और कवि कम हो चुके थे। जरूर वे दूर दराज से आने का बहाना बनाकर गये होंगे, मैंने मन ही मन कहा। फिर यह भी सोचा कि काश! यह बहाना मेरे पास भी होता। पर तभी मुझे याद आ गया कि मैंने तो आयोजक से कहा ही था कि मेरे बेटे की परीक्षा है। बस मैं लपककर उसके पास गया और उसके कानों में अर्जी दी और उससे दबे स्वर में गोष्ठी छोड़ने का परमिट लेकर श्रोताओं को हाथ जोड़े और बाहर हो गया। मुझे डर था कि अब कहीं अध्यक्ष जी फिर से संबोधित न कर दें, पर वे निर्विकार थे।

घर पहुँचने पर जब भागवान ने जिज्ञासा की कि आज जडल्दी आ गए, कहो तो आज कैसी रही? मैंने कह दिया मौसम के हाल जैसी, छुटपुट बूंदाबांदी के अलावा मौसम आम तौर से खुश्क रहा।

– अमरदीप कुलश्रेष्ठ

युवा कविता

अस्पताल भूत...

गूगल पर टाइप करें शब्द 'भूत'
देखेंगे...
"इन जगहों पर कभी मत जाना, यहाँ भूत रहते हैं...
"भूतों पर यकीन नहीं करते तो देखें...
"अस्पताल में मंडराती है एक औरत की आत्मा...

आश्चर्य! विज्ञान का सबसे प्रभावशाली अविष्कार इंटरनेट पर भी भूतों को लेकर अजीबो-गरीब कहानियाँ, घटनाएं, आपबीती इत्यादि का भ्रमजाल फैला हुआ है। भूत ने गूगल तक को नहीं छोड़ा है...!

किन्तु प्रश्न है, क्या वाकई में भूत होते हैं? कुछ लोगों को भूत क्यों दिखाई देते हैं? क्या भूत भी लोगों पर हमला करते हैं? भूत को लेकर क्या करना है तर्कवादियों का? इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिए आइये एक अस्पताल की भूताह घटना पर नजर डालते हैं।

कोलकाता के पाइकपाड़ा स्थित इन्दिरा मातृसदन एवं शिशु कल्याण अस्पताल। अचानक लोगों के कानों-कान यह खबर फैल गयी कि, "मातृसदन एवं शिशु कल्याण अस्पताल। अचानक लोगों में कानों-कान यह खबर फैल गयी कि, "मातृसदन अस्पताल में भूत है।" शाम ढलने के बाद जहाँ चारों तरफ अंधेरा छाने लगता है, वहीं अस्पताल परिसर में एक महिला की भूताह आत्मा मंडराने लगती है। पिछले कुछ दिनों से यहाँ इलाज करवाने के लिए आने वाले कई लोगों ने उस भूत को अपनी आंखों से देखा है। इतना ही नहीं बल्कि भूत ने दो-चार लोगों को निशाना बनाकर उन्हें जख्मी तक कर दिया है। इस तरह के एक के बाद एक भुताह कारनामों से जहाँ महिलाएं आतंकित हैं, वहीं पुरुष भी इस अस्पताल परिसर में कदम रखने से कतराते हैं। उन्हें यह डर सताने लगी है कि कहीं इलाज करवाने गये तो इन पर भूत चढ़ नहीं बैठे। इसके कारण आजकल विशेष रूप से शाम ढलने के बाद से यहाँ इलाज के लिए मरीजों का आना-जाना तकरीबन बंद हो गया है। अस्पताल मरीजों और उनके परिजनों से सूना सा पड़ गया है। ऐसी हालत में इस अस्पताल को दूर से देखने से लगेगा यह कोई अस्पताल नहीं बल्कि कोई भुताह खंडहर है।

यहाँ के एक कर्मी ने कहा, मातृसदन में एक औरत का भूत मंडराता है। रात में जहाँ से जब भी कोई आदमी अकेला गुजरता है तो वह औरत उस पर हमला कर देती है। इस बीच उस भूत के हाथों कई लोग जख्मी हो चुके हैं। जबकि कइयों ने उस भूत को अपनी आंखों से भी देखा है। हमले को अंजाम देने के बाद पलक झपकते ही वह औरत अचानक गायब भी हो जाती है।"

कुल मिलाकर भूत के डर से अस्पताल में अजीब सा सन्नाटा छाया हुआ है। किन्तु सबसे अजीब बात यह है कि भूत के आतंक से यहाँ आम लोग रात में अस्पताल में इलाज के लिए आने से कतराते हैं, वहीं जुआरी, शराबी जैसे समाज विरोधियों का अड्डा भी खूब जमने लगा है। किन्तु इन बदमाशोंको भूत ना तो दिखाई देता है और ना ही कोई अ-शरीर औरत हमला करती है।

अस्पताल के आस पास रहने वाले लोगों ने कहा, "देख-रेख तथा मरम्मत के अभाव में इस अस्पताल की दशा खंडहर जैसी बन गयी है। ऐसी हालत में यहाँ किसी भी समय हादसे होने का डर लगा रहता है। स्थानीय कई महिलाओं ने आरोप लगाया कि "जब वे अपने परिवार की किसी गर्भवती को इलाज या जाँच के लिए इस अस्पताल में ले जाती हैं तो यहाँ के कर्मी यह कह कर उन्हें डरा देते हैं कि यहाँ सिर्फ रात में ही नहीं बल्कि दिन में भू भूत मंडराता है। एक औरत का भूत अस्पताल में भटकता हुआ अक्सर दिखाई देता है। किसी को अकेले पाकर वह भूत हमला कर जख्मी भी कर देती है।"

कई महिलाओं ने भी कहा, "इस अस्पताल में भूत है, यह खबर काफी दिनों से फैली हुई है। अस्पताल में जब भी कोई गर्भवती महिला भर्ती होने या प्रसव के लिए आती है तो अस्पताल में कर्मी उन्हें कहते हैं, "रात में यहाँ एक औरत का

भूत आता है। भूत के आने पर यहाँ डरावनी घटनाएं शुरू होने लगती है। वह भूत किसी को भी क्षति पहुँचा सकता है।" गर्भवती महिलाओं से कहा जाता है, "अस्पताल में प्रसव कराने में माँ एवं शिशु दोनों का ही नुकसान हो सकता है।"

अस्पताल में औरत की भटकती आत्मा या भूत जैसी बातों से साफ इनकार करते हुए अस्पताल के अधीक्षक डॉ० डी० बासु ने कहा, "इस अस्पताल में कई तरह की समस्याएं अवश्य हैं लेकिन भूत-प्रेत जैसी बातें पूरी तरह से बकवास है। सिर्फ लोगों में डर फैलाने के लिए भूतों की अफवाह फैलाई गई है।"

डॉ० बसु की तरह ही स्वास्थ्य अधिकारी संचित बक्शी ने कहा, "मैं इन बातों की स्वयं जांच करूंगी। इसके लिए मैंने जल्द ही अस्पताल का दौरा भी करने जा रही हूँ। उसके बाद ही आगे का कदम उठाया जाएगा।"

मीडिया में आयी खबर के मुताबिक,"इस अस्पताल में अधिकांश शैय्या ही लम्बे समय से खाली पड़ी रहती हैं। आपात स्थिति में किसी मरीज को यहाँ से अन्य अस्पताल में जाने के लिए एम्बुलेंस की व्यवस्था तक नहीं है। महिलाओं के प्रसव या ऑपरेशन के लिए आवश्यक उपकरण नहीं हैं। नवजात शिशुओं के लिए वेंटीलेटर की व्यवस्था नहीं है। इनक्यूबेटर नहीं है। अस्पताल में 4 चिकित्सकों सहति कुल 7 स्वास्थ्य कर्मी हैं।"

इस अस्पताल में मरीजों का पता ही चलता है। यहाँ चिकित्सकीय व्यवस्था में काफी खामियाँ हैं ऐसी स्थिति में इस अस्पताल में भूत का आतंक फैल गया है।"

सिर्फ अस्पताल बना देने से तो काम नहीं चलता। मरीज भर्ती कर लिए जाएं और उनकी पर्याप्त चिकित्सा न हो तो स्थिति खराब हो जाती है तो शायद वहाँ भूत-प्रेत की अफवाह जरूर फैलेगी।

मातृसदन अस्पताल में भूत मंडरा रहै है, यह खबर सुनने के बाद ही भारतीय विज्ञान व युक्तिवादी समिति के अध्यक्ष प्रबीर घोष ने शाम ढलने के बाद अस्पताल का दौरा किया। उनके साथ एक इलेक्ट्रानिक मीडिया भी न्यूज कवरेज करने के लिए गया। मीडिया की ओवी वैन देखकर अस्पताल के सामने उत्सुक लोगों की भीड़ भी जुटने लगी। सुरक्षा के लिए स्थानीय थाने से भारी संख्या में पुलिस भी मौके पर पहुँची। प्रबीर ने अस्पताल परिसर और विभिन्न जगहों की छानबीन शुरू की।

अस्पताल के पास कुछ जुआरी-शराबी लोग इकट्ठे हुए थे। उन्हें देखकर घोष ने कहा, "आप लोग यहाँ से चले जाएं। यदि मीडिया में आपके बारे में खबर आ गयी तो मुश्किल में पड़ सकते हैं।" यह सुनकर लोग वहाँ से भूत की तरह गायब हो गये। इसके बाद प्रबीर ने देर रात तक अस्पताल के कोने कोने में भूताह औरत की तलाश की, लेकिन वो कहीं पर भी नहीं दिखाई दी।

अंतत: प्रबीर घोष ने कहा, "इस अस्पताल में भूत नाम की कोई चीज नहीं है। भूताह औरत भी नहीं है। लोगों को डराने और परेशान करने के लिए कुछ शरारती या बदमाश किस्म के लोगों ने भूत की अफवाह फैलायी है। मरीजों के नहीं आने और अस्पताल में कर्मियों की संख्या कम होने के कारण इस अस्पताल में असामाजिक तत्वों का अड्डा भी जमने लगा है। यहाँ की स्वास्थ्य सेवा बेहतर बनाने से सारी समस्याएं स्वयं ही खत्म हो जाएगी।"

भूत दिखाने वालों को 25 लाख रुपये की चुनौती देते हुए प्रबीर घोष ने कहा, "भूत सिर्फ एक अफवाह मात्र है। फिर भी यदि कोई भूत का प्रमाण दिया तो उन्हें मैं 25 लाख रुपये दूंगा।" उन्होंने कहा, "पुलिस व प्रशासन से अनुरोध करुंगा कि जो लोग इस अस्पताल में भूत की अफवाह फैलाने में लगे हुए हैं, उन्हें चिह्नित कर अभियुक्तों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाएं। साथ ही अस्पताल प्रबंधन को यहाँ चिकित्सकीय बुनियादी ढांचे को विकास में ध्यान देने चाहिए।"

– संतोष शर्मा

पता : जाफरपुर, कल्याणी हाई वे

पोस्ट : नोना चन्दनपुकुर, उत्तर 24 परगना,

कोलकाता-700122, पश्चिम बंगाल

मोबाइल : 09330451977

ई मेल : rationalist.journalist@gmail.com।

युवा कविता

अम्बेदकर-गाँधी में वैचारिक अन्तर्विरोध

डॉ० भीमराव अम्बेदकर महाराष्ट्र की जिस महार जाति में जन्में थे, वह भी कट्टर हिन्दी समाज में अस्पृश्य मानी जाती थी। हिन्दू समाज के इसी अभिशप्त वर्ग में जन्म लेने के कारण विदेशों में उच्चतम शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद भी उन्हें इस समाज के तथाकथित ऊँची जाति वालों के सामाजिक बहिष्कार की अपमानजनक अवहेलनाएं सहन करनी पड़ती थीं।

भारत उस समय वर्तानवीं साम्राज्य का उपनिवेश था। विदेशी साम्राज्य के इस जुए को उतार फेंकने के लिए देश में एक देशव्यापी स्वतंत्रता संग्राम जोरों पर था। इस संग्राम में देशके विभिन्न धार्मिक समुदायों तथा विभिन्न संस्कृतियों से जुड़े हुए लाखों लोग शामिल थे और सही तरह के बलिदान दे रहे थे। इसी का फल था कि विदेशी हाकिम ने सन् 1930 में सात समुद्र पार, अपने देश की राजधानी लंदन में भी देश की सभी प्रमुख जातियों तथा सभी प्रमुख राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों को एक गोलमेज कन्फरेन्स में आमंत्रित किया ताकि देश की भावी व्यवस्था के लिए एक सर्वसम्मत संविधान की बुनियादी बातों का निर्णय किया जा सके। यह कान्फरेन्स लन्दन में 12-11-1930 ई० से 19-01-1931 तक चालू रही।

इस गोलमेज कान्फरेन्स में 89 सदस्यों में से 16 बर्तानवी राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि, 20 भारतीय सामन्ती इकाइयों के साथ 53 बर्तानवी भारत के विभिन्न दलों के प्रतिनिधि शामिल हुए थे। भारत के अस्पृश्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिए डॉ० भीमराव अम्बेदकर तथा राव बहादुर टी. श्रीनिवासन भी आमंत्रित किये गये थे। ब्रिटिश प्रधानमंत्री रम्जे मैकडोनल्ड सभा के अध्यक्ष थे।

डॉ० अम्बेडकर ने अपने इस कान्फरेन्स में दिए भाषण में जोर देकर कहा कि हमारे इस दलित समाज (वर्ग) ने बर्तानवी आधिपत्य का इस धारणा से स्वागत किया था कि वह हमें धार्मिक कट्टरपंथी हिन्दुओं के दमन और अत्याचार से निजात दिलायेंगे। हमारे दलित वर्ग ने हिन्दुओं, मुसलमानों तथा सिक्खों के विरुद्ध अंग्रेजों की लड़ाई लड़ी थी। और उनके लिए यह महान भारतीय साम्राज्य उपलब्ध कराया था। लेकिन मैं पूछता हूँ कि ब्रिटिश सत्ता ने हमारी इस सामाजिक अस्पृश्यता को दूर करने के लिए आज तक क्या किया है ? अंग्रेजों के आने के पहले भी हम मंदिर में नहीं जा सकते थे, क्या अब आपके राज्य में प्रतिबंध दूर हो गए हैं ? अंग्रेजों के आने के पहले पुलिस फोर्स तथा सेना में हम भर्ती नहीं हो सकते थे, क्या अंग्रेजी राज्य ने हमारा वह अधिकार दिया है ? हमारी दशा में परिवर्तन क्यों नहीं हुआ ? अब हमें विश्वास हो गया है कि हमारी समस्याओं का समाधान करने की योग्यता अंग्रेजी सरकार में नहीं है। ऐसा नहीं है कि आप हमें उद्धार के लिए कुछ कर नहीं सकते थे, लेकिन आपका चरित्र, आपकी मनसा (Motive) और आपके हित (Interest) आपको हारे प्रति न्याय करने से रोकते रहे। अंग्रेजी शासन डरता था कि उसने परम्परा से चले आ रहे सामाजिक तथा आर्थिक विधि विधान को बदलने की कोशिश की तो देश का शोषक स्वार्थ प्रशासन के लिए परेशानिया पैदा कर देगा। देश में इस प्रकार के प्रशासन को भला हम क्यों चाहेंगे। हम तो अब देश में एसी राज्य-व्यवस्था की स्थापना चाहते हैं, जो देश के सामूहिक हित के लिए समर्पित हो और जो सदियों से जारी इस सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक शोषण, दमन भी अन्याय को उखाड़ फेंकने के लिए प्रतिबद्ध हो। हम इस भ्रामक धारणा का यहाँ जोरदार खंडन करते हैं कि दलित वर्ग की समस्या एक सामाजिक समस्या है और इसका राजनीति अथवा राजनीतिक अधिकारों से कोई सम्बन्ध नहीं है। हम भ्रांतिजनक धारणा का विरोध करते हैं, क्योंकि हम मानते हैं कि भारत के दलित वर्ग की यह समस्या तब तक नहीं सुलझेगी, जब तक हमें अपने उचित राजनीतिक अधिकार नहीं मिल जाते।[2]

डॉ० अम्बेदकर के इस भाषण का ही परिणाम था कि

पहली गोलमेज कान्फरेन्स ने अपने इस दो महीने तक चलने राले अधिवेशन के अन्त में जिन नौ उपसमितियों का गठन किया था, उनमें अधिकतर में डॉ० अम्बेदकर को सम्मिलित किया गया। इन नौ उप-समितियों में एक उपसमिति अल्पसंख्यकों की स्थिति के बारे में रिपोर्ट तैयार करने के लिए बनाई थी।

लन्दन में होने वाली इस पहली गोलमेज कान्फरेन्स में भारत के सबसे बड़े राजनीतिक दल कांग्रेस का कोई प्रतिनिधि शामिल नहीं था। कांफ्रेस के सभी प्रभु नेता उस समय जेल में बन्द थे। महात्मा गाँधी ने इन्हीं कुछ बुनियादी बातों को लेकर इस कांग्रेस का बहिष्कार किया था। दूसरी गोलमेज कांफ्रेन्स 7 सितम्बर, 1931 से शुरू होने वाली थी। इसमें कांग्रेस के प्रतिनिधियों सहित 120 सदस्य आमंत्रित किये गये थे। दलितों के प्रतिनिधि के रूप में अम्बेदकर को ही पुन: निमंत्रण मिला था।

दूसरी गोलमेज कान्फ्रेंस के लिए जाने से पहले अर्थात् 14 अगस्त 1931 को महात्मा गाँधी के आमन्त्रण पर डॉ० अम्बेदकर बम्बई में ही उनसे मिलने गए। यह इन दोनों नेताओं की पहली भेंट थी। गाँधी जी ने कहा –"सुना है आपको मुझसे और कांग्रेस से शिकायतें हैं, जब आप पैदा भी नहीं हुए थे, तब से मैं अछूतों की समस्या को सुलझाने का यत्न कर रहा हूँ। कांग्रेस इस समय अछूतोद्धार के लिए 24-25 लाख रुपये खर्च कर चुकी है। आश्चर्य है कि फिर भी आप मेरा और कांग्रेस का विरोध कर रहे हैं।"

उत्तर में डॉ० अम्बेदकर ने कहा – "कांग्रेस ने अछूतोद्धार के लिए जो 24-25 लाख रुपया खर्च किया, मैं समझता हूँ, वह निरर्थक गया। उतने धन से तो मैं अछूतों में एक अपूर्व परिवर्तन ला देता। हम महात्माओं में आस्था नहीं रखते। हमारी समस्या के प्रति तो आज तक सवर्णों/सवर्ण हिन्दुओं का कोई हृदय परिवर्तन नहीं हुआ। डॉ० अम्बेदकर ने आगे कहा कि जिस देश में हमें पशुों से बदतर समझा जाता है, उस देश को मैं अपना देश कैसे कहूँ? इस बात का निरन्तर ध्यान रहता है कि मेरे किसी भी कार्य से देश के हित को हानि न पहुँचे, लेकिन अछूतों के मौलिक अधिकारों के लिए लड़ना संघर्ष करना, देशद्रोह तो नहीं समझा जाना चाहिए।[3]

महात्मा गाँधी ने पहली गोलमेज कांफ्रेन्स में डॉ० भीमराव अम्बेदकर के योगदान की सराहना की और कहा कि मैं तो आपको एक महान देशभक्त मानता हूँ। लेकिन हिन्दुओं और हरिजनों में राजनीतिक पृथकता का मैं विरोधी हूँ।

महात्मा गांधी के प्रति डॉ० अम्बेदकर का यह विश्वास और अनास्था एक दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य था। दूसरी ओर गोलमेज कांफ्रेन्स के लिए दोनों नेता लन्दन जाने वाले थे, दोनों के लक्ष्यों में विरोध नहीं था, लेकिन उस लक्ष्य को प्राप्ति के साधनों में अवश्य ही अन्तर ही नहीं, विरोध भी था। यह बात अल्पसंख्यक समिति (Minority Committee) को प्रारम्भिक बैठक में ही उभर कर सामने आ गई थी।

महात्मा गांधी ने कहा – इस समिति में मैंने विशेष हितों की सूची को देखा है। अछूतों के लिए पृथक मताधिकार की बात को मैं देश के लिए घातक मानता हूँ। इस विषय में मैं डॉ० अम्बेदकर से सहमत नहीं हूँ।

महात्मा गाँधी के इस कथन का डॉ० अम्बेदकर ने विरोध करते हुए कहा कि महात्मा गांधी और कांग्रेस दूसरे अल्पसंख्य वर्गों के लिए जो भी विशेषाधिकार देने को राजी हो, वह दलितों के हिस्से में से नहीं दिए जाने चाहिए। इस उप-समिति की अध्यक्षता भी ब्रिटिश प्रधानमंत्री रम्जे मैक्डोनल्ड ही कर रहे थे। उन्होंने भी डॉ० अम्बेदकर के पक्ष को न्यायोचित मानकर उसकी सराहना की।

डॉ० अम्बेदकर ने अल्पमत समिति के दलितों के अधिकारों के लिए संविधान में प्रावधान रखने के लिए तीन मांगे एक पूरक स्मरण-पत्र के द्वारा रखी। पहली यह कि अछुतों को केन्द्रीय तथा प्रांतीय विधान सभाओं में उनकी जनसंख्या के अनुसार रिशेष प्रतिनिधित्व दिया जो। उसके लिए दूसरे अल्पसंख्यक वर्गों (सिक्ख, मुस्लिम, एंग्लो-इंडियन, ईसाई आदि) की तरह दलितों को भी पृथक निर्वाचन का अधिकार दिया जाये। अनन्तर दलितों के लिए सुरक्षित स्थानों पर

संयुक्त निर्वाचन की व्यवस्था कर दी जाए तथा अछूतों को दलित या हरिजन करने की बजाय उप-जाति हिन्दू या प्रोटेस्टेंट हिन्दू कहा जाए।

महात्मा गांधी के अल्पमत समिति की इन सिफारिसों का कड़ा विरोध किया, लेकिन ब्रिटिश सरकार भारतीय विभिन्न वर्णों की इन परस्पर विरोधी मांगों में अपने उपनिवेशवादी प्रशासन के लिए 'सुरक्षा' देखती थी। इसलिए अल्पसंख्यक-समिति ने देश के लिए नई निर्वाचन प्रणाली का प्रावधान रखने की सिफारिश कर दी। इस घोषणा ने देश की राजनीतिक वातावरण में अशान्ति और तनाव पैदा कर दिया। कांग्रेस के नेता इसे साम्राज्यवादी शासन को जन-विभाजन कूटनीति मानते थे।

महात्मा गांधी ने उद्घोषणा की कि वह इस पृथक निर्वाचन-प्रणाली को कभी स्वीकार नहीं करेंगे। क्योंकि यह देश संगठन को छिन्न-भिन्न कर देने की एक साम्राज्यवादी चाल है। मैं अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी इसका विरोध करूँगा। केन्द्रीय विधान सभा में 'दलितों के प्रतिनिधि' डॉ० बी.एस. मूँजे तथा एम.सी. राजा ने भी इस पृथक निर्वाचन प्रणाली का विरोध किया। उन्होंने दलितों के लिए 'सीटें' सुरक्षित रखकर, उनके लिए संयुक्त चुनाव कराने का समर्थन किया। उधर देश में जगह-जगह दलित वर्ग की संस्थाओं ने डॉ० अम्बेदकर को दलितों का मुक्तिदाता कहकर उनका जय-जयकार किया। अल्पसंख्यक समिति द्वारा तैयार की गई पृथक निर्वाचन सम्बन्धी इस रिपोर्ट के विरुद्ध महात्मा गांधी तथा कांग्रेस के विरोध और असंतोष को देखकर डॉ० अम्बेदकर पुन: लन्दन जा पहुँचे।

26 मई, 1932 को डॉ० अम्बेदकर लन्दन के लिए रवाना हो गए ताकि साम्प्रदायिक निर्णय से पूर्व वह ब्रिटिश प्रधानमंत्री तथा मंत्रीमण्डल के अन्य सदस्यों से मिल सकें। इस मुलाकात को सबसे छिपाकर रखा गया ताकि विरोधी लोग कोई बखेड़ा न खड़ा कर दें।

17 अगस्त को डॉ० अम्बेदकर भारत लौट आए और 20 अगस्त को ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने 'कम्यूनल अवार्ड' (Communal Award) की घोषणा कर दी। इस अवार्ड में दलितों को भी पृथक निर्वाचन के अधिकार की घोषणा की गई। विधान सभाों में उनके लिए सुरक्षित सीटें रखने का प्रावधान रखा गया। दलितों को 'डबल वोट' देने का भी अधिकार मिला। अर्थात अपने प्रतिनिधियों को चुनने के लिए मत देना तथा अन्य प्रतिनिधियों के चुनाव में भी वोट देना। यह डॉ० अम्बेदकर की बहुत बड़ी जीत थी। इस 'अवार्ड' में मुसलमानो, सिक्खों, ईसाइयों आदि को भी पृथक चुनाव का अधिकार मिला था।[4]

महात्मा गाँधी और कांग्रेस के नेता इस 'अवार्ड' को देश कि लिए शरारतपूर्ण और घातक समझते थे। इसलिए उन्होने इसे वापिस लेने के लिए सरकार पर दबाव डालने के लिए देशव्यापी आन्दोलन चलाने का निश्चय किया। लेकिन सरकार ने पहले ही महात्मा गांधी को कैद करके पूना की यर्वदा जेल में बन्द कर दिया। वहाँ महात्मा ने पृथक निर्वाचन सम्बन्धी 'अवार्ड' को निरस्त करवाने के लिए 20 सितम्बर, 1932 के दिन आमरण अनशन प्रारम्भ करने की घोषणा कर दी। इससे सारा देश एक संकट की स्थिति में आ गया। देशवासी जानते थे कि महात्मा गांधी अपने निश्चय से टस से मस नहीं होंगे। अत: देश के सभी प्रमुख नेता चिन्तित हो उठे। 20 सितम्बर से महात्मा गांधी ने अपना आमरण अनशन शुरू कर दिया। 21 सितम्बर को देश के कई प्रमुख नेता जेल में गाँधी जी को देखने गए, डॉ० अम्बेदकर भी उनमें से एक थे। इतिहास इस तथ्य की भी भली प्रकार साक्षी है कि कुछ भेंटों में ही डॉ० अम्बेदकर और महात्मा गांधी में 'पूना पैक्ट' नाम से प्रसिद्ध वह समझौता हो गया था। जिसमें डॉ० अम्बेदकर ने पृथक निर्वाचन के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन पद्धति की बात मान ली थी और महात्मा गांधी ने भी दलितों के लिए उनकी संख्या के अनुरूप प्रादेशिक तथा केन्द्रीय विधान सभाओं में सुरक्षित स्थानों के प्रावधानों को स्वीकार कर लिया था। पूना पैक्ट पर निम्न वर्गों की ओर से डॉ०अम्बेदकर और सवर्ण हिन्दुओं की ओर से पं० मदनमोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किए और

निर्णय हुआ कि प्रांतीय विधान सभाओं में 148 स्थान एवं केन्द्रीय विधान सभा में 10 प्रतिशत निम्न जाति के प्रतिनिधि आरक्षित रखे जाएं। जिस सौहार्दपूर्ण वातावरण में महात्मा गांधी और डॉ० अम्बेदकर की यह बातचीत हुई, वह ऐतिहासिक घटना बनकर रह गई।

दोनों नेताओं के आदान-प्रदान (Give and Take) की इस उदारता के कारण देश पर आया हुआ यह संकट टल गया। जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी अपनी प्रतिज्ञा के बन्धन से मुक्त हुए, वहीं दलितों के मुक्तिदाता डॉ० अम्बेदकर को अपनी लक्ष्य सिद्धि प्रप्त करने का अवसर मिल गया।

महात्मा गाँधी ने जहाँ-जहाँ भी शोषित एवं पीड़ित लोगों के संदर्भ में दक्षिणी अफ्रीका की स्थिति का जिक्र उठाया है, तभी-तभी डॉ० अम्बेदकर ने महात्मा गाँधी की बातों पर टिप्पणी में कहा है कि– "हम दक्षिणी अफ्रीका की बात करते हैं, यह आश्चर्य का विषय है, कि हम जो किसी को अलग रखे जडाने के विरुद्ध इतनी तीव्रता से आवाज उठाते रहे हैं, क्या हम नहीं जानते कि हमारे प्रत्येक गांव में दक्षिण अफ्रीका है, हमें केवल उधर जाना और देखना है कि गाँव में सब जगह दक्षिण अफ्रीका है।"

महात्मा गाँधी ने सदैव ही अहिंसा की लड़ाई लड़ी है तथा भारी बलिदान देकर विजय प्राप्त भी की है। इस पर भी डॉ० अम्बेदकर अपने उद्गारों में स्पष्ट करते थे कि– "मैं स्वयं अहिंसा में विश्वास रखता हूँ, किन्तु मैं अहिंसा और कायरता में भेद करता हूँ। कायरता ऐसी कमजोरी है, जिसे व्यक्ति स्वेच्छा से अपने ऊपर लादता है यह उसका गुण नहीं है।"

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने चरखा चलाकर, अपने हाथों से खद्दर बुनकर स्वदेशी का आन्दोलन चलाया था। हमारे विचारों से बापू का मुख्य उद्देश्य विदेश माल का बहिष्कार तथा भारी कलपूर्जों वाले बड़े-बड़े मिलों की और से लोगों को उदासीन करना श्रमिकों को अपने पैरों पर खड़ा होने का आह्वान मात्र ही था। क्योंकि आज जहाँ चरखा देश से गायब हो गया है, वहीं भारी भरकर मशीनों ने देश की छाती को मथकर रख दिया है।

श्रमिक आन्दोलन के प्रति तो डॉ० अम्बेदकर का दृष्टिकोण कुछ और ही था। 17 सितम्बर 1948 को दिल्ली ऑल इण्डिया ट्रेड यूनियन कैम्प में मजदूरों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि– "सर्वप्रथम मजदूरों को यह बात त्याग देना चाहिए कि भारत में उनका अंतिम लक्ष्य ट्रेड यूनियन स्थापित करना ही है, इससे ज्यादा नहीं। मजदूरों को यह घोषणा करनी चाहिए कि भारत में उनका लक्ष्य सरकार सम्भालना है। इसके लिए उन्हें राजनीतिक दल के तौर पर लेबर पार्टी संगठित करनी चाहिए। यह दल ट्रेड यूनियन की गतिविधियाँ भी करेगा। किन्तु इसे ट्रेड यूनियनवाद की संकीर्ण और संकुचित दृष्टि से मुक्त होना चाहिए। साथ ही इसे साम्प्रदायिक पूंजीवादी राजनैतिक दलों से दूर रहना चाहिए। मजदूरों को योग्य बनाकर निश्चित रूप से सिद्ध करना चाहिए कि ये दूसरों से बेहतर सरकार चला सकते हैं।"

उपरोक्त विषयों के अतिरिक्त भी डॉ० अम्बेदकर और महात्मा गाँधी में वैचारिक विरोध स्पष्ट दिखाई देता है। अनेक विषयों को लेकर यदि हम तनिक विचार करें तो, इनकी झलक स्पष्ट दिखाई दे जाती है। महात्मा गांधी ने हरिजन नामक पत्र निकालना आरम्भ कर जहाँ अछूतोद्धार के सतत् प्रयास किये हैं, वहीं डॉ० अम्बेदकर ने 'मूकनायक' नामक पाक्षिक पत्र निलाना आरम्भ किया और सबको समान आदर एवं अछूतों को शिक्षा आदि की सुविधाएं दिए जाने के बारे में प्रखर लेख लिखे हैं।

महात्मा गाँधी ने जहाँ 'रामधुन' पर हरिजनों, दलितो, पिछड़ों को 'पतति पावन सीताराम' के नाम पर जागने का आह्वान किया है, तो वहीं दूसरी ओर लोगों को सम्बोधित कर डॉ० अम्बेदकर ने कहा है कि– "यदि तुम लोग स्वयं अपनी दासता को पूर्णत: समाप्त करने की प्रतिज्ञा पर डटे रहते हो, उसके लिए कष्ट और कठिनाइयाँ सहने को तैयार हो तो अपने इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने तथा संघर्ष के द्वारा ही आप शक्ति और प्रतिष्ठा प्राप्त कर पाओगे।"

डॉ० अम्बेदकर ने जून 1945 में What congress & Gandhi have done to untouchables? (कांग्रेस व महात्मा गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया ?) नामक पुस्तक की रचना कर, गाँधीजी और कांग्रेस की नीतियों की आलोचना की। उन्होंने 1948 में 'अछूत लोग' (The untouchables) तथा 1951 में जाति विच्छेद नामक पुस्तक में दलितोद्धार हेतु लिखी।

अन्तिम विषय वैसे तो बड़ा बचकाना सा लगता है, परन्तु है बड़ा गम्भीर। महात्मा गांधी सदैव ही नारी जाति से या तो उदासीन रहे अथवा सारी उम्र उस पर प्रयोग ही करते रहे। कच्ची उम्र में ही 'बा' (कस्तूरबा गांधी) से विवाह हो जाने पर कुछेक बच्चे पैदाकर लिए, उन्हें अपना मित्र बनाकर अन्त में 'बा' (माँ) ही कहने लगे। अंतिम दिनों में तो चलने-फिरने उठने-बैठने के लिए युवा लड़कियों का सहारा राष्ट्रपिता के पास रह गया था। यदि महात्मा जी की आत्मकथा को सांगोपांग पढ़ा जाए तो बापू इससे भी आगे की बात कह गये हैं।

कहने का अभिप्राय है कि – बापू ने केवल नारी सुखद 'पल्लू' (आंचल) ही देखा है। शायद उनके पास उसकी पीड़ा जानने का समय ही नहीं था या वह उस ओर से अनदेखी कर गए। किन्तु बिडम्बना ही है कि इस देश में युगों-युगों से नारी पर अत्याचार भी बराबर ही होते आए हैं। उसका शोषण तो जाति-पांति से उपजा घृणा के कारण हुआ और कुछ आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो रहे लोगों को न सह पाने के कारण।

पूर्व काल में तो समग्र स्त्री जाति ही शिक्षा से वंचित थी। पुरातन युग में पुत्र को प्राप्त करने के लिए स्त्रियों को घोर अपमान से गुजरना पड़ता ता, परन्तु फिर भी कई बार तो वे अपने पुत्र भी अपना अधिकार नहीं रख पाती थी। समाज ने उसे पति पराधीन बना दिया। उसे तलाक तक का भी अधिकार प्राप्त नहीं था। हिन्दु समाज में लड़कियों को अपनी इच्छानुसार विवाह करने का अधिकार भी नहीं था। विधवा हो जाने की स्थिति में उसे पति के संयुक्त परिवार की सम्पत्ति में कोई हिस्सा नहीं मिलता था।

कानूनी संरक्षण प्रदान करने के लिए बाबा साहब ने बम्बई विदान परिषद में महिलाओं को प्रसव-अवकाश देने सम्बन्धी बिल का जोरदार शब्दों में समर्थन किया। नारी की दशा को बदलने के लिए उनके मन में बहुत दृढ़ता थी। उन दिनों उनकी शारीरिक अवस्था अच्छी नहीं थी। फिर भी भारतीय नारी के कल्याण की तीव्र भावना से 'हिन्दू कोड बिल' का मसौदा तैयार करने में दिन-रात एक करते रहे। उनके अथक परिश्रम के परिणामस्वरूप तैयार किया हुआ, 'हिन्दू कोड बिल' 5 फरवरी, 1951 को संसद में पेश पुआ। इस बिल में उत्तराधिकार, गुजारा, भरण-पोषण, विवाह, तलाक, गोद लेना आदि मुद्दों पर हिन्दूत्व की एकता तथा प्रगतिशीलता की दृष्टि से विचार किया गया।

स्त्री-मजदूरों को वेतन के साथ प्रसूति छुट्टियों की सुविधा भी डॉ० अम्बेदकर के कठिन संघर्ष की ही देन है। "भारतीय नारी का उत्थान एवं पतन" जैसी महत्वपूर्ण पुस्तक निस्संदेह बाबा साहिब द्वारा रचित भारतीय नारी की मार्ग दर्शक है। आज भारतीय नारी को जो अधिकार प्राप्त है और यदि जीवन के हर क्षेत्र में मानवीय अधिकारों का आनन्द अनुभव कर रही है, तो यह सब बाबा साहब डॉ० अम्बेदकर के महाप्रयासों का फल है।

संदर्भ

1. Thus spoke Ambedkar Vol. I
2. शीराजा, अगस्त-सितम्बर 1991, पृष्ठ 8-9
3. दलित वर्ग के पहले बैरिस्टर डॉ० अम्बेदकर : लेखक– प्रो० रामनाथ शास्त्री
4. डॉ० अम्बेदकर : व्यक्तित्व और कृतित्व (डॉ. डी.आर. जाटव) पृष्ठ 148

–रामशरण युयुत्सु
श्री अंगिरा शोध संस्थान,
419/3, शान्ति नगर, पटियाला चौक
जीन्द– 126102 (हरियाणा)
मो० : 9416387432

युवा कविता

सुखयम बुढ़ापा हो पूरे विश्व की प्राथमिकता

बढ़ती जीवन प्रत्याशा की वजह से दुनियाभर में बुजुर्गों की तादाद लगातार बढ़जी जा रही है। बुढ़ापा आने पर हर व्यक्ति में शारीरिक, सामाजिक बीमारी संबंधी और मनोवैज्ञानिक रूप से कई बदलाव आते हैं, जबकि उनकी जरूरतों, उनकी स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकता उतनी तेजी से नहीं बदल पाती। हमारी व्यवस्था जीवनपर्यंत चलती रहती है और कभी-कभी इसमें बदलती जीवनचर्या के हिसाब से बदलाव भी लाया जा सकता है। वर्तमान स्वास्थ्य सुविधाओं को लेकर हमारे लक्ष्य अब काफी बदल चुके हैं। संयुक्त परिवार की जगह स्वतंत्र रहन-सहन की व्यवस्था ने ले ली है। इस रहन सहन की नई व्यवस्था को लाने में जहाँ एक तरफ हमारे बुजुर्गों की बढ़ी हुई जीवन प्रत्याशा, आजाद ख्याल और स्वाभिमान का योगदान है, वही दूसरी तरफ युवा पीढ़ी का स्वतंत्र और बेरोकटोक जीवन जीने की चाहत भी है। हालांकि बढती उम्र के साथ कई नई तरह की बीमारियां, अव्यवस्था और अक्षमता भी सामने आती है, जिनसे अकेले निपटना मुश्किल होता है।

पिछले कुछ दशकों के दौरान भारतीय बुजुर्गों के असामयिक निधन की बड़ी वजह संक्रामक बीमारियाँ नहीं बल्कि असंक्रामक बीमारियाँ और उसके प्रभाव ज्यादा देखे गए। बढ़ती जीवन प्रत्याशा और खराब स्वास्थ्य सुविधाओं की वजह से ही जवानी में बुढ़ापे की ओर कदम रख रहे लोगों और उनकी देखभाल करने वालों के लिए समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। अलग-अलग बीमारियों से जूझ रहे बुजुर्गों को उनकी जरूरत के हिसाब से खास स्वास्थ्य सुविधा मुहैया कराना पूरी दुनिया के सामने सबसे बड़ी चुनौती है। इतिहास में पहली बार दुनिया के ज्यादातर शख्स आज 60 से ज्यादा उम्र तक जीने की उम्मीद रख सकते हैं। ऐसे में बुजुर्गों की बढ़ती आबादी को सुविधा मुहैया कराना विश्व के नीति निर्मातों के सामने बड़ी चुनौती है।

साल 1901 में भारत के बुजुर्गों की तादाद सिर्फ 12 मिलियन थी जो कि 1951 में बढ़कर 19 मिलियन हो गई। 2001 आते-आते ये संख्या 77 मिलियन और 2011 में 104 मिलियन पहुँच गई। उम्मीद है कि 2021 तक ये संख्या 137 मिलियन तक पहुँच जाएगी। दुनिया के दूसरे सबसे ज्यादा बुजुर्गों वाले हमारे देश को इनकी संख्या दोगुनी होने में मात्र 25 साल लगे।

आबादी मिलियन में	पुरुष	महिला	कुल
भारती कुल जनसंख्या	623.3	587.6	1210.9
60+ लोगों की संख्या	51.1	52.8	103.9
ग्रामीण	36.0	37.3	73.3
शहरी	15.1	15.5	30.6
कुल आबादी में बुजुर्गों का %	8.2	9.0	8.6

सौजन्य : जनगणना 2011, एसआरएस रिपोर्ट 2013

बुजुर्गों की समस्याओं की ज्यादातर वजह अपर्याप्त आमदनी, उपयुक्त रोजगार अवसर की कमी, आवासीय सुविधाओं की खराब स्थिति, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य संबंधी परेशानियाँ सामाजिक सुरक्षा का अभाव, बदलती पारिवारिक व्यवस्था में बढ़ते तनाव और दबाव के साथ ही सेवानिवृत्ति के बाद समुचित गतिविधइयों का अभाव जैसे कारक रहे हैं। सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बदलाव ने बुजुर्गों के जीने के अंदाज को काफी प्रभावित किया है। इसलिए तनाव और दबाव को नियंत्रित करने के लिए जरूरी नीति बनाने और उन्हें लागू करने की जरूरत है।

उम्र के अनुसार आनेवाली अक्षमताओं में कम दिखाई देना, सुनाई देने की दिक्कत, खाना खाने/पचाने में दिक्कत, याददाश्त की कमी और चलने फिरने में परेशानी समेत शरीर के आंतरिक भागों : खासतौर से मल-मूत्र त्याग में परेशानी और कई दीर्घकालीन बीमारियां/ गड़बड़ियां शरीर में पैदा हो जाती हैं। तेजी से हो रहे शहरीकरण और अस्वस्थ जीवनचर्या उम्र से संबंधित दीर्घकालीक रोगों जैसे हृदय की बीमारी, कैंसर, मधुमेह इत्यादि की मूल वजह है। बच्चों/

रिश्तेदारों पर आर्थिक रूप से निर्भरता, परिवार में खुद निर्णय लेने के अधिकार में कमी और घटती सामाजिक पहचान भी बुजुर्गों के आत्मविश्वास में कमी की वजह बनती है। आनेवाले दिनों में स्थिति और भी गंभीर होने की आशंका जताई जा रही है।

बुजुर्ग लोगों के स्वास्थ्य के लिए समुचित खानपान बेहद जरूरी है और ये बुढ़ापे की ओर जा रहे शरीर की पूरी कार्यप्रणाली पर असर डालता है। युवाओं की अपेक्षा बुजुर्ग ज्यादा असुरक्षित होते हैं क्योंकि शरीर के सभी अंगों का सुचारू रूप से काम करना प्रभावित होता है जैसे मांसपेशियों का साथ नहीं देना हड्डियों में समस्या, पाचन तंत्र ठीक से काम नहीं करना, खून की कमी चेतना में कमी, घावों को ठीक होने में देरी और लगातार बीमारी/अस्पताल जाना/सर्जरी जैसी स्थितियां अक्सर मृत्यु की वजह बन जाती है। बदलाव के इस दौर में बुजुर्गों को कई बार अकेले अपने रोजमर्रा के कार्य करने के लिए छोड़ दिया जाता है जिसका असर उनके स्वास्थ्य और पोषण पर पड़ता है। खाना खम खा पाने और खाने में जरूरी कई स्वास्थ्य समस्याओं के बावजूद उम्रदराज होने का मतलब किसी पर बोझ होना तो बिल्कुल नहीं समझना चाहिए। स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने, बीमारियों की रोकथाम और प्राथमिक उपचार से लेकर प्रशामक उपचार तक सभी का लक्ष्य बुजुर्गों की बची हुई जिंदगी को रोगमुक्त बनाना होना चाहिए। 2002 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने एक नीतिगत कार्यप्रणाली 'एक्टिव एजिंग' जारी की थी, जिसमें इस बात पर जोर दिया गया था कि बुजुर्ग व्यक्ति अपने परिवार, समाज और अर्थव्यवस्था के लिए एक संसाधन बना रहे।

बुजुर्गों की बढ़ती संख्या से कल्याणकारी योजनाएं और स्वास्थ्य देखभाल तंत्र के साथ ही उनके परिवार पर भी दबाव बढ़ता है। सच्चाई ये है कि आनेवाले दिनों में ज्यादा से ज्यादा लोग लम्बी आयु को प्राप्त करेंगे। इससे हमारे स्वास्थ्य तंत्र पर संक्रामक बीमारियों और विसंगतियों का बोझ भी बढ़ेगा, जिसका दबाव पूरे समाज पर दिखाई देगा। इसलिए हमारी कल्याणकारी नीतियों/योजनाओं और स्वास्थ्य सेवाओं को उसी अनुरूप बनाए जाने की जरूरत है।

भारत में राज्य सरकारों, गैर सरकारी संस्थाओं और सामाजिक संस्थाओं के सहयोग से केंद्रीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय बुजुर्गों के लिए कई जरूरी कार्ययोजनाएं बनाता है और उन्हें लागू करता है। बुजुर्गों के लिए एकीकृत योजना (आईपीओपी) के तहत मंत्रालय कई योजनाएं चला रहा है। वृद्ध आश्रम और आराम घर समेत बुजुर्गों के लिए कई तरह के सुविधा केन्द्र चलाए जा रहे हैं।

मोबाइल मेडिकेयर यूनिट अलजाइमर/डिमेंसिया से पीड़ित वृद्ध लोगों के लिए डे केयर सेंटर, बुजुर्ग विधवों के लिए सर्व सुविधा युक्त स्वास्थ्य केन्द्र, फिजियोथेरेपी क्लिनिक, क्षेत्रीय संसाधन और ट्रेनिंग केन्द्र के साथ ही दूसरी कई योजनाएं वृद्धों को ध्यान में रखकर चलाई जा रही है।

'सुखमय बुढ़ापा' पूरे विश्व की प्राथमिकता होनी चाहिए!!

स्वस्थ बुढ़ापे की अवधारणा का प्रचार-प्रसार किए जाने की जरूरत है, जिसमें बुजुर्गों का बीमारियों से बचाव, उनका उत्साह बढ़ाना, देखभाल और उनके पुनर्वास की सुविधा देना शामिल है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के डॉ० चटर्जी कहते हैं कि 'हमें मिलकर बुजुर्गों की देखभाल पर लगने वाले खर्च से ऊपर जाकर ये सोचना होगा कि एक वृद्ध और अनुभवी व्यक्ति जो स्वस्थ और खुश है वो पूरे समाज की बेहतरी के लिए कितना बड़ा योगदान कर सकता है।'

हमारे बड़े-बुजुर्गों ने अपने जीवन में जो अनुभव हासिल किए हैं वो हमारे लिए खजाना है। हमें उनका आदर और उनकी देखभाल करनी चाहिए। एक कहावत है– बड़े-बुजुरक्तों के चरण ही दुनिया की सबसे बेहतरीन कक्षा है।'

–डॉ० संतोष जैन पस्सी
जन स्वास्थ्य पोषण सलाहकार, पूर्व निदेशक, इंस्टीट्यूट ऑफ होम इकोनोमिक्स दिल्ली विश्वविद्यालय
सुश्री आकांक्षा जैन- पीएचडी स्कॉलर
जनस्वास्थ्य और पोषण के क्षेत्र में काम करती हैं।